International Journal of Hindi Research
ISSN: 2455-2232, Impact Factor: RJIF 5.22
www.hindijournal.com
Volume 2; Issue 2; March 2016; Page No. 34-36

विजयदान देथा : राजस्थानी कथा यात्रा

पिंकी शर्मा

Department of Hindi, Ch. Bansi Lal Govt. College, Loharu Bhiwani, Haryana, India

प्रस्तावना

मानव सभ्यता के आदि काल से ही कहानी कहने की परंपरा किसी न किसी रूप में रही है। इसलिए विश्व के प्राचीनतम उपलब्ध ग्रन्थ ऋग्वेद में भी यम–यमी, पुरूरवा–उर्वशी आदि संवादात्मक आख्यानों का मिलना स्वाभाविक है। आगे चलकर हमारे विभिन्न उपनिषदों, ब्राह्मणों, महाकाव्यों, पुराणों, जैन–बौद्ध तथा जातक साहित्य में कहानियों का अगाध भंडार मिलता है। कहानी के संबंध में साहित्य समालोचना के मनीषियों का मानना है कि कहानी का उद्भव पश्चिमी देशों में हुआ है। डॉ0 गणपतिचन्द्र गुप्त के मतानुसार –"आधुनिक कहानी का आरंभ यूरोप के विभिन्न लेखक–समूहों के द्वारा 19वीं शती में हुआ। इस लेखक–समूह में सर्वप्रथम उल्लेखनीय हैं जर्मनी के ई. टी. डब्ल्यू. हॉफमैन। दूसरी और जैकब और विल्हेल्म ग्रिम ने परियों और पुराणों की कथाओं के संग्रह इसी काल में प्रकाशित करवाये। किन्तु इस युग में सर्वोत्कृष्ट कहानियाँ एडगर एलन पो के द्वारा लिखी गई। पो ने न केवल कहानियाँ लिखी, अपितु उसने कहानी कला का विवेचन भी किया। यूरोप में विकसित कहानी का स्वरूप अंग्रेजी और बँगला के माध्यम से 20वीं शताब्दी के आरम्भ में हिन्दी में पहुँचा।"[1]

कहानी को पश्चिम सभ्यता की देन मानते हुए 'आचार्य रामचन्द्र शुक्ल' ने भी यह स्वीकार किया है कि– "हिन्दी ने कहानी का ढाँचा पश्चिम से लिया है। पर उन्होंने सावधान किया है कि यह ग्रहण 'ढाँचे' तक ही सीमित रहना चाहिए।"[2]

विजयदान देथा ने जबकि यह कहा है कि कहानी पश्चिम की देन न होकर अपने–अपने क्षेत्र की देन है। इनका मानना है कि कहानी में पश्चिमी सभ्यता का कहीं दूर–दूर तक नामोनिशान नहीं है। देथा जी के अनुसार धरती पर पहला कथाकार (कहानीकार) लोक में हुआ है। उसने कथा रची और अपने लोक को सुनाई।

'आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी' ने 'कहानी' को भारतवर्ष की देन मानते हुए 'वेनिफी' के बारे में लिखा है कि– "वेनिफी ने पहले पंचतंत्र की कहानियों का अनुवाद करके यूरोपियन कहानियों से तुलना की। उन्हें इस निष्कर्ष पर पहुँचना पड़ा कि संसार की कहानियों का मूल भारतवर्ष ही है।"[3]

कुछ समय पूर्व यह धारणा भी अत्यन्त बलवती थी कि विश्वभर की लोक–कहानियों का मूल एक स्थान है। वहीं से चलकर वे विश्व भर में फैली। 'हिन्दी साहित्य कोश' के अनुसार – "बेन्फी ने यह सिद्ध किया कि वह मूल स्थान भारत है। उन्होंने भारतीय कहानियों की विश्वयात्रा का क्रमबद्ध मार्ग भी निर्देशित किया। यह मत अंशतः आज भी मान्य है।"[4]

कहानी अंग्रेजी शब्द 'शॉर्ट स्टोरी' का साहित्यिक रूप है। विद्वानों के इस कथन को लगभग सब लोगों ने स्वीकार किया है। लगभग सभी भाषाओं के विद्वानों ने अपने साहित्य ग्रंथो में भी इस बात का उल्लेख किया है। हिन्दी साहित्य में भी इस बात को पुरजोर रूप में स्वीकार किया गया है कि कहानी अंग्रेजी के 'शॉर्ट स्टोरी' का ही रूप है। राजस्थानी साहित्य के इतिहास लेखकों ने भी इस बात को स्वीकार किया है। परन्तु कहानी पर चिन्तन करते समय यह बात स्पष्ट रूप से हमारे चिन्तन के लिए प्रस्तुत होती है कि कहानी बिना बात के नहीं बनती है। यह भी नहीं है कि कहानी से बात का कोई प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष संबंध नहीं हो। कहानी पहले एक बात है फिर कोई कहानी।

कहानी 'कथा' या 'बात' से ही बनी है। कहानी के निर्माण के लिए बात तत्व का होना अति आवश्यक है। बात के धरातल पर ही कहानी रची जाती है। बात कहानी का मर्म है। फिर भी बात अपने मूल रूप से कहानी से सर्वदा भिन्न है। यह देश, यह प्रदेश तो बातों का खजाना है। प्राचीन काल में जितनी बातें विश्व के बात साहित्य में यहाँ पैदा हुई हैं, संभवतः अन्य किसी देश में नहीं हुई। बी0एल0माली अशान्त के अनुसार– "ऋग्वेद के स्तुतिपरक सूक्तों में उपलब्ध कथाएँ विश्व की प्राचीनतम कथाएँ हैं। जैसाकि ज्ञातव्य है, ऋग्वेद की रचना मरुभूमि पर बहने वाली पवित्र सरस्वती नदी के तट पर अलौकिक ज्ञान के विद्वान ऋषि–महर्षियों ने की है। इसी मरुप्रदेश में मध्यकाल में बात साहित्य काफी फला–फूला और भारतीय साहित्य में यह साहित्य अग्रणी बना। राजस्थानी का बात साहित्य बड़ा विस्तृत है। मारवाड़ के कविराज बाँकी दास ने अकेले 2800 बातें लिखी हैं।"[5]

धरती पर बात साहित्य का अथाह भण्डार है। राजस्थान का बात साहित्य विश्व की धरोहर है। बात साहित्य संसार के लिए साहित्यिक आश्चर्य है। इस आश्चर्य का अध्ययन किए बिना और इस अचरज के तत्वों की व्याख्या किए बिना कहानी की व्याख्या का अर्थ भली भाँति नहीं समझा जा सकता है। कहानी या कथा, लोक की उपज है। राजस्थान में ही नहीं भारतीय कथा यात्रा भी लोक से ही शुरु हुई है।

राजस्थानी कथा यात्रा 1904 में शुरू हुई है। परन्तु कहानी को पहले–पहल कथा रूप में बात के समान लोक में ही कहा गया है और इसका व्यापक विकास भी लोक में ही हुआ है। इन कथा या बातों ने लोक के अन्दर संस्कारों का निर्माण किया है।

प्रांरभिक स्तर पर विजयदान देथा की कहानियाँ बात हैं। देथा जी ने इन कथाओं को लोक के कंठ से लेकर कागज पर लिखी हैं। पहले ये कथाएँ बात रूप में थी। परंतु जब लिपि का विकास हुआ तब लोगों ने इसे कलमबद्ध किया और ये लोक कथाओं के रूप में जानी जाने लगी। राजस्थान में मध्यकाल में बात साहित्य काफी फला–फूला और भारतीय साहित्य में यह अग्रणी बना। आधुनिक काल में इसका प्रचलन कम हुआ है, परंतु गाँवों में आज भी कम–बेसी रूप में मनोरंजन के लिए इसका प्रयोग होता है।

बातें मनोरंजन का साधन रही हैं। आज भी कोई बात कहता है, तो चलते आदमी के पैर थम जाते हैं। गाँव, चौपाल व घरों में बातें बड़ी चर्चित रही हैं। बड़े बुजुर्गों से लेकर बच्चों के लिए दादी–नानी की कहानियाँ इन्हीं बातों का रूप हैं। बच्चों की बातें शिक्षाप्रद रही हैं।

मध्यकाल में राजदरबारों एंव धनिकों के यहाँ तो कहानी कहने वाले होते थे और वे अपने विशेष लहजे में कहानी सुनाया करते। परन्तु लोक में इसका स्वरूप भिन्न था। घरों में दादी–नानी एवं बूढ़ी औरतें बच्चों को कहानी सुनाया करती तो गाँव–चौपाल और अलाव के चारों तरफ बैठकर बुजुर्ग लोग कहानी कहते–सुनते। जिसे इस

संदर्भ में कहानी कहा जाता है, वही बात है। असल में जो बात, जो लोक शब्द रचना लोक कंठों से कागज पर उतरी है उसके लिए साहित्य अकादेमी ने अपने सर्वोच्च पुरस्कार भी दिए हैं। इसी संदर्भ में बी0एल0माली अशान्त ने लिखा है– "बात कहानी ही है' इस तथ्य को साहित्य अकादेमी (दिल्ली) ने अपने सर्वोच्च पुरस्कार देने के साथ स्वीकृत किया है।"[6]

बात ने राजस्थानी गद्य को लोक कंठों में जिन्दा रखा है। गद्य का सुंदर रूप बातों में मिलता है। बातें किसी की भी हो सकती हैं। पशु–पक्षी, राजा–रंक, ब्राह्मण–ब्राह्मणी आदि किसी की भी। कई बातों में तो पात्रों का नाम तक भी नहीं होता परन्तु कौतूहल इतना होता है कि श्रोता जुड़ा रहता है। बात साहित्य की यह शक्ति कहानी साहित्य के पास नहीं है। कहानी पढ़ी जाती है, बात सुनी जाती है। बात सुनने में जितना आनन्द आता है, पढ़ने में नहीं।

विजयदान देथा की आधी से अधिक कहानियाँ लोक कथाओं व लोक कहावतों के रूप में प्रचलित हैं। इन्होंने इनको कहानियों के रूप में संजोया है। लोक कथाएँ लोक की अपनी व्यथा कथा है। लोक में प्रचलित और परम्परा से चली आने वाली, मूलतः मौखिक रूप में प्रचलित कहानियाँ, लोक कहानियाँ कहलाती हैं। ये कथाएँ कुछ तो कल्पना की सुन्दर उड़ान हैं तो कुछ ऐतिहासिक घटना का आधार लिए हुए हैं। राजस्थानी में लोक–कथाओं का विशाल भंडार है। ये लोककथाएँ विविध विषय लिए हुए हैं। कहीं राजा–महाराजा, चोर–डाकू, कहीं नारी सौंदर्य, कई ऐतिहासिक चरित्र लिए हैं तो कई प्रेम कथाएँ हैं। कई अद्‌भुत कृत्यों से संबंधित हैं। 'तिरिया चरित' एवं नारी चातुर्य संबंधी भी अनेक कथाएँ हैं। परियों, भूतप्रेतों, दैत्यों, डाइनों, सिद्धि प्राप्त योगियों, नाथों की बहुत–सी लोक कथाएँ हैं। सर्प कथाएँ भी अनेक मिलती हैं। धन और माया से संबंधित कथाएँ बहुत रोचक हैं। भाग्य, साधु–संन्यासियों और कान्ह–गुवाल जैसी भी अनेक लोक कथाएँ हैं जो प्रकृति में रमते मन की चंचलता और सरलता को व्यक्त करती हैं। बच्चों के लिए पक्षियों की कथाएँ बड़ी रोचक हैं। कहीं अनोखे पेड़ बोल उठते हैं तो कहीं आसमान जोगी बन जाता है।

लोककथा वस्तुतः मौखिक साहित्य की एक महत्वपूर्ण विधा है। ये कथाएँ बीते हुए युग की समाज व्यवस्था पर प्रकाश डालती हैं। सामजिक स्थिति तथा समाज की विशेषताओं का दिग्दर्शन कराती हैं तथा मानवीय विकास की द्योतक हैं। लोककथाओं के संबंध में नन्द भारद्वाज ने लिखा है कि श्लोक कथाओं, गाथाओं और पारम्परिक लोककलाओं के रूप में राजस्थानी समाज की जो सांस्कृतिक सम्पदा आजादी के बाद हमारे जीवन–व्यवहार में तेजी से आते हुए बदलाव के कारण विलुप्त होती जा रही थी, उसे व्यवस्थित ढ़ंग से सुरक्षित रख लेना बहुत आवश्यक हो गया था और इस आवश्यकता को विजयदान देथा और कोमल कोठारी सहित डा0 कन्हैयालाल सहल, रानी लक्ष्मी कुमारी चूण्डावत, देवीलाल समर, गोविन्द अग्रवाल, मनोहर शर्मा आदि अनेक लोक कलाविदों और वरिष्ठ साहित्यकारों ने बखूबी समझा और अपने निजी प्रयत्नों से राजस्थानी लोककथाओं की इस धरोहर को अपने–अपने ढंग से लिपिबद्ध कर प्रकाशित करने का जो ऐतिहासिक कार्य आंरभ किया, उस दिशा में विजयदान देथा, कोमल कोठारी और रूपायन संस्थान का कार्य निश्चय ही अधिक व्यवस्थित, योजनाबद्ध और सर्वाधिक महत्वपूर्ण साबित हुआ।"[7]

किसी भी संस्कृति के उद्‌गम के विषय में जानने और समझने में वाचिक परंपरा की उस विधा से आधारभूत सहायता मिलती है जिसे लोककथा कहा जाता है। लोककथाएँ वे कथाएँ हैं जो सदियों से एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी और दूसरी पीढ़ी से तीसरी पीढ़ी के सतत क्रम में प्रवाहित होती चली आ रही हैं। यह प्रवाह उस समय से प्रारंभ होता है जिस समय से मनुष्य ने अपने अनुभवों, कल्पनाओं एवं विचारों का परस्पर आदान–प्रदान प्रांरभ किया। लोककथाओं का मूल उद्‌देश्य मात्र मनोरंजन नहीं रहा है अपितु इनके माध्यम से अनुभवों का आदान–प्रदान, मानवता की शिक्षा, सद्‌कर्म का महत्व तथा अनुचित कर्म से दूर रहने का संदेश दिया जाता रहा है। डॉ0 (सुश्री) शरद सिंह के अनुसार –"ये कथाएँ हमारे लिए उतनी ही महत्वपूर्ण हैं जितनी की कोई पुरातात्विक धरोहर क्योंकि इनमें जीवन के अनुभवों एवं कल्पनाओं को बिना किसी कृत्रिमता के प्रस्तुत किया जाता है, इनमें आदि जीवन का निचोड़ है तथा इनमें संचित ज्ञान का प्रवाह है। यह प्रवाह कहीं सरस्वती नदी की भाँति लुप्त न हो जाएं इसलिए इन्हें सहेज लेना आवश्यक है।"[8]

राजस्थान की इन कदीमी लोक–कथाओं का रचना–संसार बहुत अंतरंग, बहुआयामी और विविधताओं से भरपूर है। किसी भी लिपिकार या संग्रहकर्त्ता के चयन और लेखन की खूबियों से स्वायत्त इन लोककथाओं की संरचना और प्रभाव की अपनी निजी क्षमता है। विजयदान देथा ने इस निजी क्षमता को पहचानते हुए उन्हीं प्रासंगिक कथाओं का चयन और संग्रह किया है, जो कहीं न कहीं आज भी जीवन की जटिलताओं और संश्लिष्ट मानवीय मनोभावों को समझने और सुलझाने में सहायत सिद्ध हो सकती है। नन्द भारद्वाज के अनुसार "इन कथाओं में राजस्थान के पारंपरिक ग्रामीण समाज का एक समग्र रूप प्रस्तुत हुआ है। उनमें सामंती सत्ता की स्वेच्छाचारिता, पुरुष–प्रधान जातीय ढ़ांचे के अहंकार तथा रूप, मद, माया और मोह के रूढ़ संस्कारों में जकड़े हुए स्त्री–पुरुषों के जीवन की विसंगतियों को मार्मिक संस्पर्श के साथ उभारा गया है।"[9]

विजयदान देथा की अधिकांश कहानियाँ लोक कथाएँ लगती हैं पर वे सिर्फ लोक कथाएँ नहीं हैं, यहाँ लोककथाओं की सम्मोहक दुनिया है, पर साथ ही समकालीन अर्थछवियों और प्रंसगों की जटिल बुनावट भी है। वे लोक–मानस में सहेजी–बिखरी कथाओं को अपने अप्रतिम सृजन कौशल से ऐसा स्वरूप प्रदान करते हैं कि उनमें लोक का मूल तत्व तो अक्षत रहता ही है, साथ ही युगों पुरानी कहानियाँ समकालीनता का स्पर्श पा जाती हैं।

राजस्थानी आख्यान की लोक परम्परा को लेखन और प्रकाशन के माध्यम से संरक्षित करने और उसे आधुनिक समाज में प्रतिष्ठा दिलाने के गुरुत्तर कार्य को विजयदान देथा ने जिस मौलिक सूझ–बूझ और एकल निष्ठा से सम्पन्न किया है, संभवतः उसी के चलते राजस्थानी ही नहीं बल्कि हिन्दी जगत में भी एक अलग तरह के राजस्थानी स्वभाव वाले रचनाकार के रूप में उनकी निजी पहचान और प्रतिष्ठा बनी है। बिज्जी की रचनात्मकता का स्पर्श पाकर ये लोककथाएँ सिर्फ अतीत की स्मृति भर न रहकर हमारे वर्तमान के रास्ते की ऐसी रोशनियाँ बन गई हैं, जो हमें मानवीय मूल्यबोधों का दर्शन कराती हैं। कथा लिखना या लोककथा के पटल का विस्तार करना कथावाचक का काम है परन्तु विजयदान देथा एक सिद्धलेखक, विचारक, लोकसंयुक्त व्यक्तित्व हैं। इसलिए उनके स्पर्श और पुनःसृजन से कथाएँ जीवन जगत के अनेक सत्यों का साक्षात्कार कराती हैं और पग–पग पर ऐसी सूक्तियों, कहावतों, भाषा की प्राकृतिक गन्ध और विचार की फूलझड़ियाँ छोड़ते हैं कि पूरा प्रसंग दीप्त हो जाता है।

राजस्थानी जन समाज की सांस्कृतिक एवं सामूहिक अनुभूति लोककथाओं की जिस मौखिक परंपरा का हिस्सा रही हैं, विजयदान देथा ने उन्हें नवीन मान्यताओं एवं मूल्यों की प्रस्थापना करने वाली साहित्यिक अभिव्यंजनाओं के रूप में देखा। असल में ये लोककथाएँ लगातार बुराई पर अच्छाई की जीत, असत्य पर सत्य की विजय, क्रूरता पर दयालुता की विजय और मृत्यु पर जीवन के आनन्द की विजय का आख्यान ही रचती आयी हैं।

विजयदान देथा ने अपनी कहानियों में बात कहने के लिए ही बात नहीं लिखी हैं, अपितु इन्होंने उसमें समसामयिक समस्याओं को कहने के लिए बात को एक माध्यम के रूप में अपनाया है।

प्रकाश आतुर के अनुसार श्बातां री फुलवाड़ी के रूप में प्रकाशित चौदह वृहदाकार खंड़ों में राजस्थान की पारंपरिक लोक–कथाओं के संकलन, पुनर्लेखन और प्रकाशन, बिज्जी की सृजन क्षमता को उजागर करते हैं। ये लोक–कथायें बिज्जी के कल्पनालोक, भाषा, शिल्प और जन–जन तक पहुँचने की अपूर्व क्षमता की परिचायक हैं। राजस्थानी भाषा के जनाधार और प्रेषणीय कौशल की जीवंत प्रतिमान हैं ये लोककथाएँ। जन–जन में सदियों से प्रचलित लोककथाओं को बिज्जी ने न केवल मौलिकता से प्रस्तुत किया बल्कि अपने परिवेश का अंग बनाकर, वर्तमान संदर्भों से जोड़ कर विश्वसनीयता भी प्रदान की।"[10]

विजयदान देथा की 'बातां री फुलवाड़ी' के चौदह खण्ड़ों की अधिकतर कहानियाँ लोक–कथाओं पर ही आधारित हैं। राजस्थानी लोककथाओं के अन्य संग्रहों की कथाओं से 'बातां री फुलवाड़ी' की कथाओं का एक मौलिक अन्तर यह भी है कि अन्य लोगों ने जहाँ राजाओं, राजवंशी, सवर्ण जातियों, शूरवीरों की कथाओं और प्रेमाख्यानों के माध्यम से स्वामिभक्ति, वीरता, दानशीलता, बलिदान, पतिव्रत धर्म, सतीत्व, दया और सहनशीलता जैसे सांमती समाज व्यवस्था के पोषक मूल्यों को महिमा–मंडित करने का प्रयास किया वहीं विजयदान देथा ने आज के जनतांत्रिक समाज की नयी आकांक्षाओं के अनुरूप स्वाधीनता, समानता, लोकतंत्र, सामाजिक न्याय, नारी स्वातंत्र्य और आत्म–सम्मान जैसे मानवीय मूल्यों और मानव– अधिकारों को परिपुष्ट करने वाली जीवंत और प्रेरणादायी लोक कथाओं का चयन कर उन्हें अपनी प्रवाहमयी भाषा में 'फुलवाड़ी' के माध्यम से राजस्थानी पाठकों के सम्मुख प्रस्तुत किया। यही नहीं बल्कि 'फुलवाड़ी' की इन लोक–कथाओं के माध्यम से ग्रामीण समाज में व्याप्त अन्ध–विश्वासों, रूढ़िवादिता और धार्मिक आडम्बर की जैसी धज्जियाँ उड़ाई गई हैं, वह राजस्थानी लेखन के क्षेत्र में नयी चेतना के उद्घोष की जीती जागती मिसाल है।

इन लोककथाओं या बातों को शुरु करने वाला सीधा बात पर नहीं आता बल्कि पहले उसकी भूमिका बाँधता है फिर बात कहना प्रारंभ करता है। जिस प्रकार लोक–कथाओं में 'तो रामजी भला दिन दे, एक साहूकार के च्यार बेटा हा' इस प्रकार से प्रारंभ होती है। उसी प्रकार देथा ने भी 'तो भगवान भले दिन दे कि एक था साहूकार' इस प्रकार से अपनी कहानियों का प्रारंभ किया है। विजयदान देथा की कहानियों में प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से कुछ न कुछ संदेश अवश्य निहित है। कुछ कहानियों में यह संदेश स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर होता है तथा कुछ में यह संदेश परे का होता है जो हमें स्पष्ट दृष्टिगत नहीं होता है।

निष्कर्ष

विजयदान देथा ने अपनी कहानियों में लोककथाओं का भरपूर प्रयोग किया है। उनके 'बातां री फुलवाड़ी' के चौदह खण्डों में अधिकतर कहानियाँ लोककथाओं के आधार पर ही लिखी गई हैं। विजयदान देथा लोक में रहने वाले हैं और उन्होंने अपने लोक में जो देखा व ढाणी–ढाणी, गली–गली घूमकर लोगों से जो बातें सुनी, उन्हीं को उन्होंने अपने कहानी संग्रहों में लिपिबद्ध करने का प्रयास किया है। इस प्रकार उनकी कहानियों में बात का अत्यधिक महत्व है। क्योंकि बात के आधार पर ही कहानियों की रचना होती है। विजयदान देथा मिथक रचते हैं, जिसमें कल्पना का समावेश होता है। देथा ने अपने कथा साहित्य में यही किया है। उन्होंने दंतकथाओं को सुनकर, उसमें कल्पना का समावेश करके कहानियों की रचना की है। इनकी कहानियाँ सिर्फ लोककथाएँ ही नहीं हैं अपितु इनमें समकालीन अर्थछवियों और प्रसंगों की जटिल बुनावट भी है।

संदर्भ सूची

1. गुप्त गणपति चन्द्र, साहित्यिक निबंध, लोकभारती प्रकाशन, इलाहबाद, बाइसवाँ संस्करणः 2011, पृष्ठ–430
2. राय गोपाल, हिन्दी कहानी का इतिहास, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पहला संस्करणः 2011, पृष्ठ–31
3. द्विवेदी हजारीप्रसाद, हिन्दी साहित्य की भूमिका, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करणः 2012, पृष्ठ–151
4. हिन्दी साहित्य कोश भाग–1, सम्पादक–धीरेन्द्र वर्मा, ज्ञानमण्डल लिमिटेड, वाराणसी, पुनर्मुद्रण–2010, पृष्ठ–512
5. माली बी0एल0 अशान्त, राजस्थानी साहित्य का मध्यकाल, राजस्थानी भाषा बाल साहित्य प्रकाशन ट्रस्ट, लक्ष्मणगढ़ (सीकर), प्रथम संस्करण–1994, पृष्ठ–143
6. समकालीन भारतीय साहित्य, द्विमासिक पत्रिका, साहित्य अकादेमी, नई दिल्ली, अंक–121 सिंतम्बर–अक्टूबर 2005, पृष्ठ–98
7. विजयदान देथा : मोनोग्राफ, संपादक– प्रकाश आतुर, राजस्थान साहित्य अकादमी उदयपुर, पृष्ठ–11
8. डॉ0 (सुश्री) सिंह शरद, भारत के आदिवासी क्षेत्रों की लोककथाएँ, नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया, पहला संस्करण : 2009, तीसरी आवृत्ति : 2011, पृष्ठ–11
9. विजयदान देथा : मोनोग्राफ, संपादक – प्रकाश आतुर, राजस्थान साहित्य अकादमी, उदयपुर, पृष्ठ–12
10. विजयदान देथा : मोनोग्राफ, संपादक–प्रकाश आतुर, राजस्थान साहित्य अकादमी, उदयपुर, पृष्ठ–6